*Journal of Advances and Scholarly Research In Allied Education*
*Vol.23, Issue No. 4 July-2026, ISSN 2230-7540*

# राजभाषा हिंदी के प्रभावी क्रियान्वयन की भाषाई एवं प्रशासनिक चुनौतियाँ

**डॉ. अरविन्द सिंह तेजावत***

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़, हरियाणा, भारत

office.tejawat@gmail.com

**शोध सार:** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 द्वारा हिंदी को संघ की राजभाषा का दर्जा प्राप्त हुए सात दशक से अधिक व्यतीत हो चुके हैं, तथापि उसका व्यावहारिक क्रियान्वयन अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच सका है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य इस अंतराल के कारणों का व्यवस्थित विश्लेषण प्रस्तुत करना है। अध्ययन में क्रियान्वयन की बाधाओं को दो व्यापक वर्गों में विभाजित किया गया है—भाषाई एवं प्रशासनिक। भाषाई चुनौतियों के अंतर्गत अनुवाद-केंद्रित कार्य-पद्धति से उत्पन्न कृत्रिमता, अत्यधिक संस्कृतनिष्ठ पारिभाषिक शब्दावली की दुर्बोधता, शब्दावली-निर्माण में एकरूपता का अभाव, मानक वर्तनी की अनिश्चितता तथा विधिक एवं तकनीकी हिंदी की अपर्याप्तता का परीक्षण किया गया है। प्रशासनिक चुनौतियों के अंतर्गत अंग्रेज़ी-केंद्रित कार्य-संस्कृति, प्रशिक्षण-तंत्र की सीमाएँ, मात्रात्मक लक्ष्यों पर अत्यधिक निर्भरता, प्रोत्साहन-योजनाओं की सीमित प्रभावशीलता, "ग" क्षेत्र में क्रियान्वयन का असंतुलन तथा तकनीकी अवसंरचना की कमियों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में यह प्रतिपादित किया गया है कि मूल समस्या विधिक ढाँचे की अपर्याप्तता नहीं, अपितु मूल्यांकन-पद्धति का दोष है—अनुपालन को दस्तावेज़ों की संख्या से मापा जाता है, उपयोगकर्ता की बोधगम्यता से नहीं। अंत में बहु-स्तरीय नीतिगत सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं।

**मुख्य शब्द:** राजभाषा अधिनियम 1963, राजभाषा नियम 1976, पारिभाषिक शब्दावली, अनुवादजन्य हिंदी, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, क-ख-ग क्षेत्र, भाषा-नियोजन, प्रशासनिक हिंदी।

## 1. प्रस्तावना

राजभाषा-नीति का उद्देश्य केवल यह नहीं है कि शासकीय कागज़ों पर हिंदी की उपस्थिति दिखाई दे; उसका वास्तविक उद्देश्य यह है कि नागरिक शासन से अपनी भाषा में संवाद कर सके और शासन के निर्णय उसे बोधगम्य हों। इस कसौटी पर परखने पर स्थिति मिश्रित दिखाई देती है। एक ओर संघ सरकार के पत्राचार, संसदीय कार्यवाही, बैंकिंग, रेलवे एवं सार्वजनिक उपक्रमों में हिंदी की मात्रात्मक उपस्थिति उल्लेखनीय रूप से बढ़ी है; दूसरी ओर नीति-निर्माण, तकनीकी विमर्श एवं निर्णय-प्रक्रिया की वास्तविक भाषा आज भी प्रायः अंग्रेज़ी बनी हुई है [3], [8], [13]।

प्रस्तुत अध्ययन का केंद्रीय प्रश्न यह है कि सुदृढ़ संवैधानिक आधार, विस्तृत विधिक ढाँचे एवं व्यापक संस्थागत तंत्र के बावजूद राजभाषा-क्रियान्वयन में यह अंतराल क्यों बना हुआ है। अध्ययन का प्रस्थान-बिंदु यह मान्यता है कि इस समस्या को केवल "इच्छाशक्ति के अभाव" के रूप में देखना अपर्याप्त है; इसके पीछे विशिष्ट भाषाई एवं संगठनात्मक कारण विद्यमान हैं, जिनकी पहचान किए बिना कोई भी

समाधान प्रभावी नहीं हो सकता। पद्धति की दृष्टि से यह अध्ययन विश्लेषणात्मक है तथा विधिक प्रावधानों, आयोग-प्रतिवेदनों, शासकीय दिशा-निर्देशों एवं द्वितीयक शोध-साहित्य पर आधारित है।

## 2. विधिक ढाँचा: संक्षिप्त पुनरावलोकन

क्रियान्वयन की चुनौतियों को समझने के लिए विधिक ढाँचे का संक्षिप्त पुनरावलोकन आवश्यक है। अनुच्छेद 343(1) देवनागरी लिपि में लिखित हिंदी को संघ की राजभाषा घोषित करता है, जबकि अनुच्छेद 343(3) संसद को पंद्रह वर्ष की अवधि के पश्चात भी अंग्रेज़ी का प्रयोग जारी रखने की विधि बनाने की शक्ति देता है। इसी शक्ति के अंतर्गत राजभाषा अधिनियम, 1963 पारित हुआ, जिसकी धारा 3 अंग्रेज़ी के सह-प्रयोग को अनुमति देती है। 1967 के संशोधन ने इस व्यवस्था को व्यावहारिक रूप से अनिश्चितकालीन बना दिया [1], [2], [4]।

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 ने क्रियान्वयन को क्षेत्रवार रणनीति प्रदान की। यह क्षेत्रीकरण ही आगे चलकर अनेक व्यावहारिक विसंगतियों का स्रोत भी बना, क्योंकि इसने भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लिए भिन्न-भिन्न अपेक्षाएँ निर्धारित कीं।

**सारणी 1: राजभाषा नियम, 1976 के अंतर्गत क्षेत्रीकरण एवं निर्धारित अपेक्षाएँ**

| क्षेत्र | सम्मिलित राज्य/संघ राज्यक्षेत्र | पत्राचार संबंधी अपेक्षा |
|---|---|---|
| "क" क्षेत्र | बिहार, छत्तीसगढ़, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, दिल्ली, अंडमान-निकोबार | सामान्यतः पूर्णतः हिंदी में; उच्च लक्ष्य निर्धारित |
| "ख" क्षेत्र | गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब, चंडीगढ़, दमन-दीव, दादरा एवं नगर हवेली | हिंदी में अधिकांश; आवश्यकतानुसार द्विभाषिक |
| "ग" क्षेत्र | शेष समस्त राज्य एवं संघ राज्यक्षेत्र | प्रायः अंग्रेज़ी; हिंदी अनुवाद संलग्न |

इस क्षेत्रीकरण का तार्किक आधार व्यावहारिक था, किंतु उसका एक अनपेक्षित परिणाम यह हुआ कि "ग" क्षेत्र में राजभाषा-कार्य प्रायः औपचारिक अनुवाद तक सीमित रह गया और वहाँ हिंदी के प्रकार्यात्मक विकास की प्रक्रिया अवरुद्ध हुई [4], [11], [13]।

### 3. संस्थागत तंत्र

राजभाषा-नीति के क्रियान्वयन के लिए एक विस्तृत संस्थागत ढाँचा विद्यमान है, जिसकी संक्षिप्त रूपरेखा निम्नलिखित सारणी में प्रस्तुत है।

**सारणी 2: राजभाषा क्रियान्वयन का संस्थागत तंत्र**

| संस्था | स्थापना | मुख्य उत्तरदायित्व |
|---|---|---|
| राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय | 1975 | समग्र समन्वय, वार्षिक कार्यक्रम, निरीक्षण |
| संसदीय राजभाषा समिति | अनु. 344(4) के अंतर्गत | प्रगति की समीक्षा एवं राष्ट्रपति को प्रतिवेदन |
| केंद्रीय हिंदी निदेशालय | 1960 | मानकीकरण, कोश-निर्माण, शिक्षण-सामग्री |
| वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग | 1961 | पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण एवं प्रकाशन |
| केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो | 1971 | शासकीय अनुवाद एवं अनुवादक-प्रशिक्षण |
| नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियाँ | 1976 से क्रमशः | नगर-स्तर पर कार्यालयों का समन्वय एवं निगरानी |
| हिंदी सलाहकार समितियाँ | मंत्रालय-स्तर पर | मंत्रालय-विशिष्ट परामर्श एवं पर्यवेक्षण |

यह तंत्र संरचनात्मक दृष्टि से पर्याप्त है। समस्या ढाँचे के अभाव में नहीं, अपितु इस ढाँचे के प्रकार्यात्मक अभिविन्यास में है—अधिकांश निकाय अनुपालन-निरीक्षण पर केंद्रित हैं, भाषिक गुणवत्ता के उन्नयन पर नहीं [8], [13], [15]।

## 4. भाषाई चुनौतियाँ

### 4.1 अनुवाद-केंद्रित कार्य-पद्धति

राजभाषा-क्रियान्वयन की सर्वाधिक मूलभूत भाषाई समस्या यह है कि शासकीय कार्य मूल रूप से अंग्रेज़ी में सोचा एवं लिखा जाता है और हिंदी केवल अनुवाद के स्तर पर प्रवेश करती है। इस पद्धति के दो गंभीर परिणाम होते हैं। प्रथम, अनूदित पाठ में अंग्रेज़ी की वाक्य-संरचना ज्यों-की-त्यों उतर आती है, जिससे ऐसी हिंदी उत्पन्न होती है जो व्याकरणतः शुद्ध होते हुए भी अस्वाभाविक लगती है। द्वितीय, और अधिक गंभीर रूप से, हिंदी में मौलिक चिंतन की क्षमता विकसित ही नहीं हो पाती, क्योंकि वह कभी विचार-निर्माण की भाषा बनती ही नहीं [7], [10], [13]।

### 4.2 पारिभाषिक शब्दावली की क्लिष्टता

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने लाखों पारिभाषिक शब्दों का निर्माण किया है, जो एक उल्लेखनीय उपलब्धि है। किंतु शब्द-निर्माण में संस्कृत-मूलक व्युत्पत्ति पर अत्यधिक बल देने के कारण अनेक शब्द ऐसे बने जो जनसामान्य के लिए दुर्बोध हैं—प्रायः मूल अंग्रेज़ी शब्द से भी अधिक। यह प्रवृत्ति अनुच्छेद 351 के उस निदेश की एकांगी व्याख्या का परिणाम है, जिसमें शब्द-भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत को स्रोत बताया गया था; उसी अनुच्छेद के "सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति" संबंधी उद्देश्य की प्रायः उपेक्षा हुई [1], [9], [12]।

**सारणी 3: शब्दावली-निर्माण में प्रचलित एवं शास्त्रीय विकल्पों की तुलना**

| अंग्रेज़ी पद | शास्त्रीय/पारिभाषिक विकल्प | प्रचलित विकल्प | व्यावहारिक टिप्पणी |
|---|---|---|---|
| Railway | लौहपथगामिनी (लोक-प्रचलित उपहासात्मक रूप) | रेल, रेलवे | प्रचलित रूप सर्वथा ग्राह्य |
| Signature | हस्ताक्षर | हस्ताक्षर, दस्तख़त | दोनों रूप समान रूप से बोधगम्य |
| Application | आवेदन-पत्र | आवेदन, अर्ज़ी | संदर्भानुसार चयन उपयुक्त |

| अंग्रेज़ी पद | शास्त्रीय/पारिभाषिक विकल्प | प्रचलित विकल्प | व्यावहारिक टिप्पणी |
|---|---|---|---|
| Computer | संगणक | कंप्यूटर | अंतर्राष्ट्रीय रूप ही प्रचलित |
| Acknowledgement | पावती | रसीद, पावती | दोनों स्वीकार्य एवं प्रचलित |
| Feedback | प्रतिपुष्टि | प्रतिक्रिया, राय | सरल विकल्प अधिक संप्रेषणीय |

सारणी का उद्देश्य पारिभाषिक शब्दावली की उपयोगिता को अस्वीकार करना नहीं है—वह विज्ञान एवं विधि के क्षेत्र में अपरिहार्य है। उद्देश्य केवल यह रेखांकित करना है कि सामान्य प्रशासनिक पत्राचार में, जहाँ पाठक साधारण नागरिक होता है, प्रचलित विकल्पों को वरीयता दी जानी चाहिए। भाषा-नियोजन का सिद्धांत यह है कि शब्दावली-निर्माण के पश्चात शब्दावली-प्रसार एक पृथक् एवं समान रूप से महत्वपूर्ण चरण है, जिसकी प्रायः उपेक्षा हुई है [5], [9], [12]।

### 4.3 एकरूपता एवं मानकीकरण का अभाव

एक ही अंग्रेज़ी पद के लिए विभिन्न मंत्रालयों एवं विभागों में भिन्न-भिन्न हिंदी शब्द प्रचलित हैं, जिससे शासकीय भाषा में असंगति उत्पन्न होती है। इसी प्रकार वर्तनी के स्तर पर भी अनिश्चितता विद्यमान है—नुक्ता का प्रयोग, अनुस्वार एवं पंचमाक्षर का विकल्प, तथा विदेशी शब्दों के लिप्यंकन की पद्धति—इन सभी पर केंद्रीय हिंदी निदेशालय के मानक निर्देश उपलब्ध होने के बावजूद व्यवहार में एकरूपता नहीं है [6], [9], [14]।

### 4.4 विधिक एवं तकनीकी हिंदी की अपर्याप्तता

विधिक क्षेत्र में हिंदी के प्रयोग की एक विशिष्ट कठिनाई यह है कि विधिक पदावली का अर्थ न्यायिक व्याख्या की दीर्घ परंपरा से निर्धारित होता है। अंग्रेज़ी विधिक शब्दों के पीछे शताब्दियों की न्यायिक व्याख्या का भंडार है, जबकि उनके हिंदी समकक्षों के पीछे ऐसी कोई परंपरा नहीं है। अनुच्छेद 348 के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय की कार्यवाही अंग्रेज़ी में ही होने के कारण यह परंपरा विकसित होने का

अवसर भी सीमित रहा है। परिणामस्वरूप विधिक हिंदी में अर्थ-निश्चितता का अभाव बना हुआ है, जो अधिवक्ताओं एवं न्यायाधीशों की अनिच्छा का एक वस्तुनिष्ठ कारण है [2], [6], [10]।

## 5. प्रशासनिक चुनौतियाँ

### 5.1 कार्य-संस्कृति एवं प्रशिक्षण

अधिकांश केंद्रीय कर्मचारियों की व्यावसायिक शिक्षा अंग्रेज़ी माध्यम से हुई है और उनकी तकनीकी शब्दावली अंग्रेज़ी में ही सुगठित है। ऐसे कर्मचारी के लिए हिंदी में कार्य करना अतिरिक्त संज्ञानात्मक भार बन जाता है। हिंदी शिक्षण योजना, प्रबोध-प्रवीण-प्राज्ञ पाठ्यक्रम तथा हिंदी टंकण एवं आशुलिपि प्रशिक्षण जैसी योजनाएँ इस समस्या के समाधान हेतु चलाई जाती हैं, किंतु इनकी अंतर्वस्तु प्रायः सामान्य भाषा-शिक्षण तक सीमित रहती है और विभाग-विशिष्ट कार्यात्मक आवश्यकताओं को संबोधित नहीं करती [8], [11], [13]।

### 5.2 मात्रात्मक लक्ष्य बनाम गुणात्मक उपलब्धि

राजभाषा-अनुपालन का मूल्यांकन प्रायः संख्यात्मक सूचकांकों से किया जाता है—हिंदी में जारी पत्रों का प्रतिशत, हिंदी में आयोजित बैठकों की संख्या, हिंदी कार्यशालाओं की संख्या इत्यादि। इन सूचकांकों का लाभ यह है कि वे मापनीय हैं; हानि यह है कि वे भाषा की गुणवत्ता एवं वास्तविक बोधगम्यता के प्रति उदासीन हैं। एक ऐसा पत्र जो व्याकरणतः हिंदी में है किंतु जिसे प्राप्तकर्ता समझ नहीं पाता, इन सूचकांकों में सफलता के रूप में गिना जाता है। यही इस अध्ययन का केंद्रीय निष्कर्ष है: समस्या नीति की नहीं, अपितु मूल्यांकन-पद्धति की है [8], [13], [15]।

### 5.3 प्रोत्साहन-तंत्र एवं क्षेत्रीय असंतुलन

हिंदी में कार्य करने के लिए नकद पुरस्कार, प्रशस्ति-पत्र एवं राजभाषा शील्ड जैसी प्रोत्साहन-योजनाएँ प्रचलित हैं। इनका सीमित प्रभाव इसलिए है कि ये कार्य-निष्पादन-मूल्यांकन एवं पदोन्नति की मुख्य धारा से संबद्ध नहीं हैं। इसके अतिरिक्त "ग" क्षेत्र में क्रियान्वयन की अपेक्षाएँ न्यून होने के कारण वहाँ राजभाषा-कार्य प्रायः अनुवाद-प्रकोष्ठ तक सिमट जाता है और हिंदी का प्रकार्यात्मक प्रयोग विकसित नहीं हो पाता [4], [11], [13]।

**5.4 तकनीकी अवसंरचना**

यूनिकोड मानक एवं इनस्क्रिप्ट कुंजीपटल के आगमन से देवनागरी के डिजिटल प्रयोग की अधिकांश तकनीकी बाधाएँ दूर हो चुकी हैं। तथापि व्यावहारिक स्तर पर कतिपय कठिनाइयाँ बनी हुई हैं—पुरानी विरासती फ़ॉन्ट-प्रणालियों में तैयार दस्तावेज़ों का यूनिकोड में रूपांतरण, हिंदी में विश्वसनीय वर्तनी-परीक्षक का अभाव, तथा अनेक विभागीय सॉफ़्टवेयर-प्रणालियों में हिंदी-समर्थन की अपूर्णता। इन कमियों के कारण हिंदी में कार्य करना तकनीकी रूप से अंग्रेज़ी की अपेक्षा अधिक श्रमसाध्य बना रहता है [5], [14], [15]।

**5.5 मानव संसाधन एवं अनुवाद-क्षमता**

राजभाषा-कार्य का व्यावहारिक भार अंततः अनुवादकों, हिंदी अधिकारियों एवं राजभाषा सहायकों पर पड़ता है, किंतु इस संवर्ग की संगठनात्मक स्थिति प्रायः परिधीय बनी हुई है। अनेक कार्यालयों में स्वीकृत पद रिक्त रहते हैं, और जहाँ नियुक्तियाँ होती भी हैं वहाँ पदोन्नति के अवसर सीमित होने के कारण अनुभवी कर्मियों का ठहराव कठिन होता है। इसके अतिरिक्त अनुवादक की भूमिका को प्रायः यांत्रिक लिप्यंतरण के रूप में देखा जाता है, जबकि प्रभावी प्रशासनिक अनुवाद के लिए विषय-वस्तु का ज्ञान, विधिक संदर्भ की समझ तथा प्रारूपण-कौशल—तीनों अपेक्षित हैं [8], [11], [13]।

एक अन्य संरचनात्मक विसंगति यह है कि अनुवाद-कार्य प्रायः प्रक्रिया के अंतिम चरण में आता है। दस्तावेज़ अंग्रेज़ी में तैयार, अनुमोदित एवं अंतिम रूप में स्वीकृत हो जाने के पश्चात अनुवाद के लिए भेजा जाता है, जिससे अनुवादक के पास न तो पर्याप्त समय होता है और न ही मूल पाठ के आशय पर प्रश्न उठाने का अवसर। यदि हिंदी संस्करण को समानांतर रूप से, प्रारूपण-चरण से ही विकसित किया जाए, तो गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार संभव है। कतिपय संस्थानों में अपनाई गई द्विभाषी प्रारूपण-पद्धति के परिणाम इस दिशा में उत्साहवर्धक रहे हैं [10], [13], [15]।

प्रशिक्षण के क्षेत्र में भी एक पुनर्विन्यास अपेक्षित है। प्रबोध, प्रवीण एवं प्राज्ञ पाठ्यक्रम मुख्यतः सामान्य भाषा-दक्षता पर केंद्रित हैं और उनका मूल्यांकन परीक्षा-आधारित है। इसके स्थान पर विभाग-विशिष्ट, कार्य-आधारित प्रशिक्षण—जिसमें कर्मचारी अपने ही विभाग के वास्तविक दस्तावेज़ों पर अभ्यास करे—अधिक प्रभावी सिद्ध हो सकता है। भाषा-अधिगम संबंधी अनुसंधान यह दर्शाते हैं कि प्रौढ़ अधिगमकर्ताओं में दक्षता तभी स्थिर होती है जब अभ्यास वास्तविक कार्य-संदर्भ में हो, न कि कृत्रिम पाठ्य-सामग्री पर [7], [12], [14]।

### 6. मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आयाम

उपर्युक्त तकनीकी एवं संगठनात्मक कारणों से भी अधिक गहरा एक मनोवैज्ञानिक कारक है—भाषा से संबद्ध प्रतिष्ठा-मूल्य। समाजभाषाविज्ञान में यह सुस्थापित है कि जिन भाषाओं का संबंध आर्थिक गतिशीलता एवं सामाजिक प्रतिष्ठा से होता है, उनके प्रति अभिवृत्ति अनुकूल होती है। भारत में अंग्रेज़ी अभी भी इस प्रतिष्ठा की वाहक है, जबकि हिंदी को प्रायः "अनिवार्य किंतु गौण" भाषा के रूप में देखा जाता है [3], [7], [12]।

यह अभिवृत्ति केवल औपनिवेशिक मानसिकता का अवशेष नहीं है, अपितु उसका एक वस्तुनिष्ठ आधार भी है—उच्च शिक्षा, अनुसंधान, प्रौद्योगिकी एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय में अंग्रेज़ी की कार्यसाधकता वास्तविक है। अतः केवल भावनात्मक अपील अथवा प्रशासनिक निर्देश से यह अभिवृत्ति नहीं बदलेगी। तब तक स्थायी परिवर्तन नहीं होगा जब तक हिंदी स्वयं ज्ञान-सृजन एवं व्यावसायिक अवसर की भाषा नहीं बनती [7], [10], [12]।

**सारणी 4: चुनौतियों का वर्गीकरण एवं संभावित हस्तक्षेप**

| चुनौती | प्रकृति | संभावित हस्तक्षेप |
|---|---|---|
| अनुवाद-केंद्रित पद्धति | भाषाई एवं प्रक्रियागत | मूल-लेखन को प्रोत्साहन; द्विभाषी प्रारूपण-प्रशिक्षण |
| क्लिष्ट पारिभाषिक शब्दावली | भाषाई | सामान्य पत्राचार हेतु सरल शब्द-सूची का पृथक् निर्धारण |
| एकरूपता का अभाव | मानकीकरण | केंद्रीय संदर्भ-कोश एवं अनिवार्य शैली-निर्देशिका |
| विधिक हिंदी की अनिश्चितता | भाषाई एवं न्यायिक | प्रामाणिक अनुवादों का प्रकाशन; अनु. 348(2) का विस्तार |
| मात्रात्मक मूल्यांकन | प्रशासनिक | उपयोगकर्ता-बोधगम्यता आधारित गुणात्मक सूचकांक |

| चुनौती | प्रकृति | संभावित हस्तक्षेप |
|---|---|---|
| प्रोत्साहन की सीमित प्रभावशीलता | प्रशासनिक | कार्य-निष्पादन मूल्यांकन से संबद्धता |
| तकनीकी अवसंरचना | तकनीकी | वर्तनी-परीक्षक, अनुवाद-सहायक, यूनिकोड रूपांतरण |
| प्रतिष्ठा-मूल्य का असंतुलन | सामाजिक-मनोवैज्ञानिक | हिंदी माध्यम में उच्च शिक्षा एवं रोज़गार-अवसर |

## 7. तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य एवं अध्ययन की सीमाएँ

राजभाषा-क्रियान्वयन की भारतीय चुनौतियों को अन्य बहुभाषिक राष्ट्रों के अनुभव के आलोक में देखने से कतिपय उपयोगी संकेत प्राप्त होते हैं। स्विट्ज़रलैंड में चार राजभाषाओं की व्यवस्था प्रादेशिक सिद्धांत पर आधारित है—प्रत्येक कैंटन अपनी भाषा में कार्य करता है और संघीय स्तर पर अनुवाद-तंत्र सक्रिय रहता है। कनाडा में द्विभाषिकता का आधार व्यक्तिगत अधिकार है—नागरिक को अपनी भाषा में सेवा प्राप्त करने का प्रवर्तनीय अधिकार प्राप्त है, और इसके अनुपालन की निगरानी एक स्वतंत्र राजभाषा आयुक्त करता है। दक्षिण अफ़्रीका में ग्यारह राजभाषाओं की व्यवस्था संवैधानिक रूप से घोषित है, यद्यपि व्यवहार में अंग्रेज़ी की प्रधानता बनी हुई है [5], [9], [12]।

**सारणी 5: चयनित बहुभाषिक राष्ट्रों में राजभाषा-व्यवस्था का तुलनात्मक स्वरूप**

| देश | व्यवस्था का आधार | निगरानी-तंत्र | भारत के लिए प्रासंगिक संकेत |
|---|---|---|---|
| स्विट्ज़रलैंड | प्रादेशिक सिद्धांत; चार राजभाषाएँ | संघीय अनुवाद सेवा | क्षेत्रीय स्वायत्तता से प्रतिरोध न्यून होता है |

| देश | व्यवस्था का आधार | निगरानी-तंत्र | भारत के लिए प्रासंगिक संकेत |
|---|---|---|---|
| कनाडा | व्यक्तिगत अधिकार; द्विभाषिकता | स्वतंत्र राजभाषा आयुक्त | नागरिक-शिकायत तंत्र अनुपालन को प्रभावी बनाता है |
| दक्षिण अफ़्रीका | संवैधानिक बहुभाषिकता; ग्यारह भाषाएँ | पैन दक्षिण अफ़्रीकी भाषा बोर्ड | घोषणा मात्र से प्रकार्यात्मक प्रयोग नहीं बढ़ता |
| भारत | हिंदी राजभाषा + अंग्रेज़ी सह-प्रयोग | राजभाषा विभाग एवं संसदीय समिति | निगरानी अनुपालन-केंद्रित; नागरिक-केंद्रित नहीं |

इस तुलना से एक महत्वपूर्ण संकेत यह मिलता है कि जिन देशों में भाषा-अधिकार को नागरिक के प्रवर्तनीय अधिकार के रूप में गठित किया गया, वहाँ अनुपालन अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी रहा। भारत में राजभाषा-अनुपालन का ढाँचा मुख्यतः अंतर-विभागीय है—कार्यालय ही निरीक्षक हैं और कार्यालय ही निरीक्ष्य। नागरिक की भूमिका इस तंत्र में लगभग अनुपस्थित है, जबकि अनुच्छेद 350 उसे अपनी भाषा में अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का अधिकार देता है। इस अधिकार को व्यावहारिक शिकायत-निवारण तंत्र से जोड़ना एक संभावित सुधार-दिशा है [1], [6], [13]।

प्रस्तुत अध्ययन की सीमाएँ भी स्पष्ट रूप से स्वीकार की जानी चाहिए। यह अध्ययन विधिक प्रावधानों, शासकीय दिशा-निर्देशों एवं द्वितीयक साहित्य पर आधारित है; इसमें कार्यालयों का कोई मौलिक क्षेत्र-सर्वेक्षण अथवा अभिलेख-आधारित सामग्री-विश्लेषण सम्मिलित नहीं है। दूसरी सीमा यह है कि "बोधगम्यता" को यहाँ एक विश्लेषणात्मक कसौटी के रूप में प्रस्तावित तो किया गया है, किंतु उसे मापने की कोई प्रमाणित पद्धति प्रस्तुत नहीं की गई। भावी अनुसंधान के लिए तीन दिशाएँ विशेष रूप से उपयोगी होंगी: शासकीय हिंदी दस्तावेज़ों पर पठनीयता-सूचकांक का विकास, विभिन्न मंत्रालयों की शब्दावली में असंगति का संगणकीय मापन, तथा सेवा-प्राप्तकर्ता नागरिकों के बीच बोधगम्यता का प्रत्यक्ष सर्वेक्षण [13], [15]।

## 8. सुझाव

- मूल्यांकन-पद्धति का पुनर्गठन किया जाए—अनुपालन को दस्तावेज़-संख्या के स्थान पर प्राप्तकर्ता की बोधगम्यता के आधार पर मापा जाए।
- सामान्य प्रशासनिक पत्राचार के लिए एक सीमित, सरल एवं प्रचलित शब्दों वाली मानक शब्द-सूची पृथक् रूप से निर्धारित की जाए।
- मूल-लेखन को प्रोत्साहित करने के लिए विभाग-विशिष्ट प्रारूपण-कार्यशालाएँ आयोजित की जाएँ, न कि सामान्य भाषा-कक्षाएँ।
- राजभाषा-निष्पादन को वार्षिक कार्य-निष्पादन मूल्यांकन प्रतिवेदन का औपचारिक अंग बनाया जाए।
- विधिक क्षेत्र में प्रामाणिक हिंदी अनुवादों का व्यवस्थित प्रकाशन हो तथा अनुच्छेद 348(2) के अंतर्गत अधिक उच्च न्यायालयों को अनुमति दी जाए।
- हिंदी वर्तनी-परीक्षक, अनुवाद-सहायक एवं शब्दावली-खोज उपकरणों के विकास में लक्षित निवेश किया जाए।
- "ग" क्षेत्र में अनुवाद-आधारित अनुपालन के स्थान पर स्थानीय भाषा-हिंदी द्विभाषिकता को प्रोत्साहित किया जाए।

## 9. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन का प्रमुख निष्कर्ष यह है कि राजभाषा हिंदी के क्रियान्वयन की समस्या का मूल न तो विधिक ढाँचे की अपर्याप्तता में है, न संस्थागत तंत्र के अभाव में। संविधान का भाग 17, राजभाषा अधिनियम 1963 एवं राजभाषा नियम 1976 एक पर्याप्त विधिक आधार प्रदान करते हैं, और राजभाषा विभाग से लेकर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों तक का तंत्र संरचनात्मक दृष्टि से पूर्ण है।

वास्तविक समस्या दो स्तरों पर है। भाषाई स्तर पर, अनुवाद-केंद्रित पद्धति एवं दुर्बोध पारिभाषिक शब्दावली ने ऐसी हिंदी उत्पन्न की है जो तकनीकी रूप से हिंदी होते हुए भी संप्रेषण की दृष्टि से अप्रभावी है। प्रशासनिक स्तर पर, मात्रात्मक अनुपालन-मापन ने इस समस्या को दृश्य होने से रोक दिया है, क्योंकि सूचकांक तो पूरे होते रहते हैं।

अतः अपेक्षित परिवर्तन नए नियमों का नहीं, अपितु दृष्टिकोण का है—भाषा को अनुपालन का विषय मानने के स्थान पर संप्रेषण का साधन मानने का। जिस दिन राजभाषा-निरीक्षण में यह प्रश्न केंद्रीय बनेगा कि "क्या नागरिक इसे समझ सका", उसी दिन से क्रियान्वयन की दिशा वास्तविक रूप से परिवर्तित होगी। यही इस अध्ययन का सारभूत प्रतिपादन है।

## संदर्भ सूची

1. भारत का संविधान (1950)। भाग 17: राजभाषा, अनुच्छेद 343–351। नई दिल्ली: विधि एवं न्याय मंत्रालय।

2. राजभाषा अधिनियम, 1963 (अधिनियम संख्या 19, 1963), जैसा कि 1967 में संशोधित किया गया। नई दिल्ली: भारत सरकार।

3. दास गुप्ता, जे. (1970)। भाषा संघर्ष और राष्ट्रीय विकास: भारत में समूह राजनीति और राष्ट्रीय भाषा नीति। बर्कले: कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस।

4. राजभाषा (संघ के आधिकारिक उद्देश्यों के लिए प्रयोग) नियम, 1976। नई दिल्ली: राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय।

5. अन्नामलाई, ई. (2001)। भारत में बहुभाषावाद का प्रबंधन: राजनीतिक और भाषाई अभिव्यक्तियाँ। नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशंस।

6. बसु, डी. डी. (2015)। भारत के संविधान का परिचय (22वां संस्करण)। गुड़गांव: लेक्सिसनेक्सिस.

7. किंग, आर. डी. (1997). नेहरू और भारत की भाषा की राजनीति. दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

8. भारत सरकार (1956). ऑफिशियल लैंग्वेज कमीशन की रिपोर्ट, 1956 (बी. जी. खेर कमीशन). नई दिल्ली: गृह मंत्रालय.

9. हौगेन, ई. (1966). "बोली, भाषा, राष्ट्र." अमेरिकन एंथ्रोपोलॉजिस्ट, 68(4), 922–935.

10. राय, ए. (2001). हिंदी राष्ट्रवाद. नई दिल्ली: ओरिएंट लॉन्गमैन.

11. भारत सरकार (1959). ऑफिशियल लैंग्वेज पर संसद की समिति की रिपोर्ट. नई दिल्ली: गृह मंत्रालय.

12. कचरू, बी. बी. (1983). अंग्रेजी का भारतीयकरण: भारत में अंग्रेजी भाषा. दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

13. मल्लिकार्जुन, बी. (2004). "आधुनिक हिंदी के लिए भाषा नियोजन के पचास वर्ष: भारत की राजभाषा." लैंग्वेज इन इंडिया, 4(11), 1–24.

14. तिवारी, भोलानाथ (1985). राष्ट्रभाषा और राजभाषा. नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन.

15. राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय (2019). *राजभाषा नीति संबंधी नियम, अनुदेश एवं वार्षिक कार्यक्रम.* नई दिल्ली: भारत सरकार.